



राजस्थान की परम्परागत लोक कलाओं का सामाजिक एवं सांस्कृतिक पक्ष :
मागणियार कलाकारों के विशेष संदर्भ में

ममता आसदेव
शोधार्थी, इतिहास विभाग
जय नारायण व्यास विश्व विद्यालय, जोधपुर

राजस्थान भारत वर्ष के पश्चिम भाग में अवस्थित है जो प्राचीन काल से विख्यात रहा है। तब इस प्रदेश में कई इकाईयाँ सम्मिलित थी जो अलग-अलग नाम से सम्बोधित की जाती थी। उदाहरण के लिए जयपुर राज्य का उत्तरी भाग मध्यदेश का हिस्सा था तो दक्षिणी भाग सपालदक्ष कहलाता था। अलवर राज्य का उत्तरी भाग कुरुदेश का हिस्सा था तो भरतपुर, धोलपुर, करौली राज्य शूरसेन देश में सम्मिलित थे। मेवाड़ जहाँ शिवि जनपद का हिस्सा था वहाँ डूंगरपुर-बांसवाड़ा वार्गट (वागड़) के नाम से जाने जाते थे। इसी प्रकार जैसलमेर राज्य के अधिकांश भाग वल्लदेश में सम्मिलित थे तो जोधपुर मरुदेश के नाम से जाना जाता था। बीकानेर राज्य तथा जोधपुर का उत्तरी भाग जांगल देश कहलाता था तो दक्षिणी बाग गुर्जरत्रा (गुजरात) के नाम से पुकारा जाता था। इसी प्रकार प्रतापगढ़, झालावाड़ तथा टोंक का अधिकांश भाग मालवादेश के अधीन था। बाद में जब राजपूत जाति के वीरों ने इस राज्य के विविध भागों पर अपना आधिपत्य जमा लिया तो उन भागों का नामकरण अपने-अपने वंश अथवा स्थान के अनुरूप कर दिया। ये राज्य उदयपुर, डूंगरपुर, बांसवाड़, प्रतापगढ़, जोधपुर, बीकानेर, किशनगढ़, सिरोही, कोटा, बूंदी, जयपुर, अलवर, भरतपुर, करौली, झालावाड़, और टोंक थे।¹

प्रसिद्ध इतिहास लेखक कर्नल टॉड ने इस राज्य का नाम "रायस्थान" रखा क्योंकि स्थानीय साहित्य एवं बोलचाल में राजाओं के निवास के प्रान्त को रायथान कहते थे। इसा का

संस्कृत रूप राजस्थान बना। हर्ष कालीन प्रान्तपति, जो इस भाग की इकाई का शासन करते थे, राजस्थानीय कहलाते थे। सातवीं शताब्दी से जब इस प्रान्त के भाग राजपूत नरेशों के आधीन होते गये तो उन्होंने पूर्व प्रचलित अधिकारियों के पद के अनुरूप इस भाग को राजस्थान की संज्ञा दी जिसे स्थानीय साहित्य में रायस्थान कहते थे। जब भारत स्वतंत्र हुआ तथा कई राज्यों के नाम पुनः परिनिष्ठित किये गये तो इस राज्य का भी चिर प्रतिष्ठित नाम राजस्थान स्वीकार कर लिया गया।

राजस्थान में सभी अंचलों में बड़े-बड़े मन्दिर और धार्मिक स्थल हैं। सन्तों की समाधियाँ और पूजास्थल हैं। तीर्थस्थल हैं। त्यौहार और उत्सवों की विभिन्न रंगीनियां हैं। धार्मिक और सामाजिक बड़े-बड़े मेलों की परम्परा है। भिन्न-भिन्न जातियों के अपने समुदायों के संस्कार हैं। लोकानुरंजन के कई विविध पक्ष हैं। पशुओं और वनस्पतियों की भी ऐसी ही खासियत है। ख्यालों, तमाशों, स्वांगों, लीलाओं की भी यहाँ भरमार है। एसा प्रदेश राजस्थान के अलावा कोई दूसरा नहीं है।²

स्थापत्य की दृष्टि से यह प्रदेश उतना ही प्राचीन है जितना मानव इतिहास। यहां की चम्बल, बनास, आहड़, लूनी, सरस्वती आदि प्राचीन नदियों के किनारे तथा अरावली की उपत्यकाओं में आदिमानव निवास करता था। खोजबीन से यह प्रमाणित हुआ है कि यह समय कम से कम भी एक लाख वर्ष पूर्व का था।

यहां के गढ़ों, हवेलियों और राजप्रासादों ने समस्त वि का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है। गढ़-गढ़ाये तो यहाँ पथ-पथ पर देखने को मिलेंगे। यहां का हर राजा और सामन्त किले को अपनी निधि और प्रतिष्ठा का सूचक समझता था। ये किले निवास के लिये ही नहीं अपितु जन-धन की सुरक्षा, सम्पत्ति की रक्षा, सामग्री के संग्रह और दुश्मन से अपने को तथा अपनी प्रजा को बचाने के उद्देश्य से बनाये जाते थे।³

राजस्थानी संस्कृति एक बहता झरना है जो किसी भी निवासी अथवा पर्यटक के मन का उल्लासित एवं तरंगित कर सकता है। राजस्थान में रहने वाले निवासियों का सौभाग्य है कि वे यहाँ की मिट्टी की खुशबू को अनुभूत करते हैं जो भक्ति और शक्ति को स्वयं में समाहित

किए हुए है। इस प्रदेश की संस्कृति को जीवंत बनाये रखने का श्रेय यहाँ के जन-सामान्य, राजा-राणा, सामन्त, जागीरदार, कलाविदों-साहित्यकारों, रण-बाँकुरों, शिल्पकारों एवं आश्रयदाताओं आदि सभी को है। उन सबके प्रति आभारी रहना ही रचनात्मकता एवं सांस्कृतिक रचनाधर्मिता से हमारा उद्गम होना सम्भव है।⁴

सभी जिलों को अपने आँचल में समेटे राजस्थान की धरती सांस्कृतिक विरासत का अनूठा सम्मिश्रण प्रस्तुत करती है। समृद्ध लोक संस्कृति के परिचायक तीज-त्योहार, उमंग के प्रतीक मेले, आस्था और विश्वास के प्रमाण लोक देवता, घूमर नृत्य करती महिलाएँ राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा की एक अनूठी मिसाल हैं। 'धरती धोरां री' से रेगिस्तान में गूँजता सुरीला लोक संगीत हर किसी को आकृष्ट करने वाला होता है। मीरां की भक्ति एवं आराधना, पद्मिनी का जौहर, हम्मीर का हठ, पन्ना का त्याग, जयमल-पत्ता की कुर्बानी, भामाशाह का सहयोग, प्रताप का स्वातन्त्र्य प्रम यहा की वैभवपूर्ण संस्कृति के हिस्से हैं। भक्ति गीतों में जहाँ एक और लोकतान्त्रिक मूल्यों को प्रतिष्ठा मिली, वहीं व्यक्ति स्वातन्त्र्य का स्वर प्रस्फुटित हुआ। राजस्थान की संस्कृति की खास बात यह है कि यहाँ लोकपरक सांस्कृतिक चेतना की अनवरत् गूँज आज भी सुनी जा सकती है।

स्थापत्य की दृष्टि से राजाओं के स्मारक जयपुर का गैटोर, जोधपुर का जसवंत थड़ा, कोटा की क्षार बाग की छतरियाँ, जैसलमेर की बड़ा बाग की छतरियाँ, उदयपुर में आहड़ की छतरियाँ आदि दर्शनीय हैं। बीकानेर में रावकल्याणमल की छतरी, अलवर में मूसी महारानी की छतरी, बूंदी में चौरासी खम्भों की छतरियाँ स्थापत्य की दृष्टि से अनूठी हैं।

राजस्थान में मूर्तिकला का उद्भव हड़प्पाकालीन रहा है। गुप्त युग की कई मूर्तियाँ मंडोर, पाली, मुकुंदरा, कामां आदि स्थानों से मिली हैं। गुप्त युग के पश्चात् पूर्व मध्यकाल को किराडू की मूर्तियाँ श्रृंगार, प्रेम और अलंकरण की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। आबू में देलवाड़ा मंदिर की मूर्तियाँ भारतीय मूर्तिकला की अमूल्य धरोहर हैं। लोद्रवा, जैसलमेर, रणकपुर, उदयपुर आदि स्थानों की मूर्तियाँ कलात्मक हैं। वल्लभ सम्प्रदाय के राजस्थान में आगमन से

मूर्तिकला को गति मिली। श्रीनाथजी (नाथद्वारा), द्वारकाधीशजी (कांकरोली), मथुराधीश जी (कोटा), गोविंददेवजी (जयपुर) आदि को मूर्तियाँ विशेष उल्लेखनीय हैं।⁵

राजपूताना की रियासतों में अपनी विशिष्ट चित्र-शैलियों का विकास हुआ। इनमें मेवाड़, मारवाड़, हाड़ौती एवं ढूँढाड़ स्कूल की चित्र-शैलियाँ प्रमुख हैं। इनके अन्तर्गत कई उप-शैलियाँ हैं, जिनमें प्रमुख नाथद्वारा, किशनगढ़, कोटा, अलवर, शेखावाटी शैलियाँ हैं। विभिन्न शैलियों में परिपोषित राजस्थानी चित्रकला निश्चय ही भारतीय चित्रकला में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। लोक जीवन, भाव प्रवणता, विषय-वस्तु का वैविध्य, चटकीले रंग, प्रकृति परिवेश आदि इसकी पहचान है।⁶

मांगणियारों की परम्पराएं

लगमान—मांगणियार हिन्दू परिवारों के यहां विवाह, जन्म, खुशी तथा अन्य उत्सवों पर गाते बजाते हैं इन गायकों को समय-समय पर लगमान दिया जाता है। धम— मांगणियारों का धम करन की प्रथा थी पर अब परिस्थितियों वश धम नहीं होता है। धम एक प्रकार का ओसर होता है। सभी मांगणियार जाति जो जैसलमेर, बाड़मेर, पोकरण, धाट, उमरकोट तक में फैली हुई धम में आते थे। एक मांगणियार सबको अपने गांव में बुलाता और परम्परानुसार सात टंक (खाना) तक उनको अपने गांव में रखकर स्वगत-सत्कार करता था। प्रथम टंक (समय) खीच, दूसरे टंक में खांड का सीरा, तीसरे टंक में गुड का सीरा, चौथे टंक में पुलाव (खीचड़ीघी), पांचवे टंक में आटा घी, छठे टंक में चनों की घुघरियां बनाकर दी जाती थी। सातवें समय गिरोल गुड़ घी देकर सीख दी जाती थी। सातवे दिन धम करने वाले मांगणियार की पत्नी श्रृंगार कर सिर पर कलश रख घुमती थी जिसमें सभी लोग पैसा डालते थे। यदि इक्के रुपये से ज्यादा खर्च होता था तो बकाया पैसा पालीवाल ब्राह्मण करते थे।”

सामाजिक जीवन— मांगणियार कभी भी एक स्थान पर नहीं रहते हैं। एक गांवसे दूसरे गांव मांगते फिरते हैं। शुक्ल पक्ष चौदस, दूज व चौथ को माताजी के थान के आगे ढोल तथा कमायचा बजाते हैं हिंगलाज माता, जोगिण्यां का थान, जूंझार का देवल, सती स्थान आदि पर ढोल बजाते हैं और चढ़ावा प्राप्त करते हैं। हिन्दू व मुसलमान दोनों प्रकार के मांगणियार

समस्त हिन्दू देवताओं को पूजते हैं, हिन्दुओं के त्यौहार मनाते हैं तथा देवताओं के गीत गाये जाते हैं व हिन्दू वेशभूषा रखते हैं पुरुष को सिर पर साफा पहनना अत्यावश्यक होता है इसके बिना गांव में प्रवेश निषेध होता है पुरुष कमीज, तेवटा व धोती पहनते हैं स्त्रियां लहंगा, कुर्ती, कांचली तथा ओढ़णा ओढ़ती है। नीला रंग यह काम में नहीं लेते हैं। 'शराब व मांस का सेवन खुब करते हैं।'⁷

विवाह—इनके विवाह पर निकाह पढ़ाई जाती है। बाकी सारा कार्य हिन्दू पद्धति से होता है। गाना—बजाना, अमल, रयाण, सामेला, तोरण, चंवरी आदि हिन्दू वैवाहिक विधि से होती है एक नख में कभी शादी नहीं करते हैं। मुसलमानों की तरह एक ही परिवार में शादीनिकाह नहीं करते हैं।”

शुभराज— मांगणियारों का स्वागत करने का अपना विशेष तरीका है। यह खड़े होकर काव्य में अपने यजमानों के वंश व उल्लेखनीय कार्यों का बखान करते हैं। शुभराज हर जाति के अलग बने होते हैं दो से सौ पंक्तियों तक का होता है।⁸

भाटी राजपूतों को शुभराज इस प्रकार करते हैं— जिण दिन कृष्ण जन्मियो, कारण पृथ्वी कलंक। वंश छतीसौ उपरै, कळ जादम निकळंक ।। कृष्णावतार जादम धणी धणी खमा अन्नदाता मांगणियारों की स्त्रियां भी शुभराज करती है बड़ी बड़ी ठकुरानियों व सेठानियों के पास खड़ी होकर पीहर व ससुराल दोनों पक्षों का शुभराज कर ईनाम पाती है। इसके अलावा भजन, खमा, गीत, हालरिया, बधावा गीत गाती है।” मांगणियारों के विशेष वाद्य यंत्र कमायचा, ढोलक, करताल, मोरचंग, अलगूंजा, सांरगी, मुरली, सुरुमंडल आदि है। झींझा, तंदूरा, मोरध्वज, इकतारा, तम्बूरा व नड़, शहनाई का भी उपयोग करते हैं। 'कमायचा व सांरगी बजाने में यह प्रवीण होत हैं करताल, मारचंग, अलगूंजा थार धरा के वाद्य यंत्र है।

राजस्थान की लोक संस्कृति धर्म, भक्ति तथा अध्यात्म से ओत-प्रोत है। यहाँ का लोकमानस सरल है और लोक देवी-देवताओं में विश्वास करने वाला है। लोक मान्यता दीर्घ काल से यह चली आ रही है कि यहाँ के लोक देवता जन-मानस के कष्टों का निवारण करते हैं और ये चमत्कार दिखाने में सक्षम हैं।

पश्चिमी राजस्थान में सांस्कृतिक पर्यटन :-

जैसलमेर—हवेलियों एवं झरोखों की नगरी जैसलमेर में पटवों की हवेली, सालिमसिंह की हवेली तथा नथमल की हवेली के झरोखे, दरवाजे एवं जालियों का नक्काशीयुक्त शिल्प विदेशी पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है। पीले पत्थरों से निर्मित जैसलमेर का 'सोनार किला' एवं किले में बनी इमारतें व जैन मंदिर पर्यटकों में अपनी छाप छोड़े बिना नहीं रहते हैं। जैसलमेर का गढ़सीसर सरोवर अपने कलात्मक प्रवेश द्वार एवं मध्य स्थित छतरियों के कारण मन को आकर्षित करता है। जैसलमेर के शासकों के निवास स्थान बादल व जवाहर विलास झरोखों व छतरियों के साथ ही दीवारों में उत्कीर्ण कलाकृतियों के लिए प्रसिद्ध हैं। बड़ा बाग में जोधपुर के शासकों के छतरी स्मारक भी दर्शनीय हैं। मूलसागर सरोवर एवं झरने कश्मीर के निशात व शालीमार बाग की याद दिलाते हैं।

जोधपुर—सूर्यनगरी जोधपुर में मेहरानगढ़ का किला, जसवंत थड़ा, मण्डोर का दुर्ग, देवताओं की साल, जनाना उद्यान, संग्रहालय आदि दर्शनीय हैं। मण्डोर में तनहापीर की दरगाह, मकबरे, जैन मंदिर, वैष्णव मंदिर आदि का स्थापत्य भी प्रशंसनीय है। जोधपुर जिले में स्थित ओसियाँ प्राचीन मंदिरों के लिए विख्यात है। यहाँ सच्चियामाता का मंदिर, हरिहर के तीन मंदिर, जैन मंदिर एवं सूर्य मंदिर प्राचीन भारतीय वास्तुकला के नमूने हैं। जिले में स्थित बालसमंद एवं कायलाना झीलें ऐतिहासिक एवं सुरम्य हैं।

बीकानेर—बीकानेर का 'जूनागढ़ का किला' व 'बीका की टेकरी' अपनी कहानी स्वयं कहते हैं। जूनागढ़ अपनी स्थापत्य कला एवं चित्रकारी के लिए प्रसिद्ध है। महाराजा गंगासिंह द्वारा निर्मित लालगढ़ पैलेस भी भव्य है। गंगा गोल्डन जुबली पार्क, लाल व सफेद पत्थरों से निर्मित रतन बिहारी जी का मंदिर, राव लूणकरण द्वारा निर्मित लक्ष्मीनारायण मंदिर एवं भाण्डाशाह द्वारा निर्मित पार्श्वनाथ मंदिर अपनी कलात्मकता के लिए विख्यात के हैं। बीकानेर के पास देवीकुण्ड में भूतपूर्व शासकों के छतरी स्मारक भी दर्शनीय

बाड़मेर—बाड़मेर के प्राचीन किले के खण्डहर, सूर्य को समर्पित प्राचीन मंदिर तथा पार्श्वनाथ का जैन मंदिर अपनी कलात्मकता के कारण दर्शनीय हैं। बाड़मेर का किराडू कस्बा प्राचीन

मंदिरों एवं उन पर अंकित चित्रों के कारण राजस्थान का 'खजुराहो' कहलाता है। यहाँ का सोमेश्वर मंदिर विख्यात है। जूना कस्बा जैन मंदिरों के स्तम्भों के लिए एवं खेड़ गाँव का रणछोड़जी मंदिर, ब्रह्मा, भैरव, महादेव व जैन मंदिर ऐतिहासिक एवं दर्शनीय

नागौर—अमरसिंह राठौड़ की शौर्यगाथाओं के लिए प्रसिद्ध नागौर का किला, किले में शाहजहाँ द्वारा निर्मित मस्जिद व गणेश मंदिर, झड़ा तालाब पर बनी सोलह खम्भों पर टिकी अमरसिंह राठौड़ की छतरी एवं कलात्मक बावड़ी, सूफी सन्त हमीमुद्दीन की दरगाह एवं इसका भव्य दरवाजा दर्शनीय है। मेड़ता में मीरा का मंदिर, पार्श्वनाथ जिनालय एवं रेण में रामस्नेही सम्प्रदाय के संत दरियावजी का मोक्ष धाम, गोठमांगलोद गाँव का दधिमाता का मंदिर एवं विशाल जलकुण्ड कपालकुण्ड भी पर्यटकों को आकर्षित करता है। जाम्भोजी की जन्मस्थली पीपासर एवं लोकदेवता तेजाजी का जन्मस्थान खड़नाल भी धार्मिक पर्यटन के स्थल हैं।⁹

निष्कर्ष :-

पश्चिमी राजस्थान की लोक कलाओं में यहां का सामाजिक जन जीवन बड़ी आसानी से देखा जा सकता है। इन लोक कलाओं में यहां की धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों का चित्रण देखा जा सकता है। पाबूजी की फड़ में तत्कालीन इतिहास, धर्म, संस्कृति, पशुपालन की अर्थ व्यवस्था और नारी मनोविज्ञान का सांगोपांग निरूपण हुआ है।

यहां के लोक गीतों में सामाजिक परिवेश के बारे में महत्वपूर्ण जानकारियां मिलती हैं। विभिन्न भू-भागों में पाई जाने वाली मिट्टियों का भरपूर सदुपयोग करते हुए यहां की नारियों ने मांडणा, सांजी, थापा, वील आदि लोक कलाओं के द्वारा यहां के सरस जन जीवन का चित्रण किया है।

सन्दर्भ :-

1. भाटी, विक्रमसिंह, जोधपुर सिलेहखाना अस्त्र-षस्त्र री विगत, रॉयल पब्लिकेशन, जोधपुर (2015) पृष्ठ सं. 24
2. भार्गव, वी.एस., मारवाड़ का मुगलों से सम्बन्ध, सागर पब्लिकेशन, 72, जनपथ, नई दिल्ली (1973) पृष्ठ सं. सम्पादकीय से।
3. माहेश्वरी, आर.एम. लोढ़ा, राजस्थान का भूगोल, (1987) पृष्ठ सं. 58
4. मित्र, मीरा , महाराजा अजीतसिंहजी एवं उनका युग, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, (1973) पृष्ठ सं. 106
5. डॉ. जयसिंह नीरज, राजस्थानी हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर – राजस्थानी चित्रकला
6. गुलाब कोठारी – राजस्थान की रंगाई छपाई, पत्रिका पब्लिकेशन, जयपुर
7. पन्नालाल मेघवाल – राजस्थान शिल्प सौंदर्य के प्रतिमान, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुरपृष्ठ सं. 258
8. देवदत्त शर्मा – राजस्थान का माटी शिल्प, राजस्थानी हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
9. डॉ. जयसिंह नीरज – राजस्थान को सांस्कृतिक परंपरा, राजस्थानी हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुरपृष्ठ सं. 94